P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-6* February (Part2) * 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

अद्वैत वेदांत और सिख पंथ के ग्रंथ "दसम ग्रंथ" में एकमत उद्देश्य का अवलोकन

गगनदीप कौर
शोधार्थी,
दर्शनशास्त्र विभाग,
राज ऋषि भर्तृहरि मत्स्य यूनिवर्सिटी अलवर, राजस्थान, भारत

सारांश

इस शोध पत्र का उद्देश्य यह मालूम करना है कि कैसे अद्वैत वेदांत और दसम ग्रंथ दोनो परंपराओं का दार्शनिक स्वरूप एक ही है व कैसे दोनो परंपरओं में एक ही अद्वैत् ब्रह्मकी व्याख्या की गई है। जो स्वरूप लक्षण है जो अनिर्वचनीय है जो सत, चित, आनंद, ज्ञान, अनंत, है जिसकी परिभाषा नेति नेति से ही दी जा सकती है, जो त्रिकाला अबाधित है, जो इस जगत के जर्रे जर्रे में बसा है व माया से इस जगत को बनाया है। वह तटस्थ लक्षण ईश्वर भी है। इस शोध पत्र की महत्वता तब और बढ जाती है, जब यह शोध आज के समाज को यह शिक्षा देने का प्रयास करता है की दोनो परंपराओं का उद्देश्य व मत एक ही है व दोनो परंपराओं का आधार भी एक ही है । जिससे आज का समाज बहुधर्मी, बहुजाती व बहुवादी सोच से उठकर एकात्मावादी सोच की और बढे जिससे मानव जीवन खुशहाल हो व समाज के लोगो की धारणा बदल सके जिससे उन्हे परमार्थिक और व्यवहारिक का अंतर भेद समझ आ सके।

मुख्य शब्द : खालसा, खडें बाटे की पहोल (अमृत छकना), हुकाम्नामा, सवैये, पारमार्थिक सत्ता, व्यावहरिक सत्ता, प्रातिभासिक सत्ता।

प्रस्तावना

दसम ग्रन्थ सिखों का महत्वपूर्ण धर्मग्रन्थ है जो गुरू गोबिन्द सिंह जी की पवित्र वाणी एवं रचनाओं का संग्रह है। गुरू गोबिन्द सिंह जी ने अपने जीवनकाल में अनेक रचनाऐं की जिनकी छोटी छोटी पोथियों बना दी । उनके देह त्यागने के बाद उनकी धर्म पत्नी माता सुन्दरी की आज्ञा से भाई मणी सिंह खालसा और अन्य खालसा भाईयों ने गुरू गोबिंद सिंह जी की सारी रचनाओं को इक्ठा किया, जिसे आज दसम ग्रन्थ कहा जाता है। सीधे शब्दों में कहा जाये तो गुरू गोबिंद सिंह जी ने रचना की और खालसे (खालसा भाईयों)ने सम्पादना की । दसम ग्रन्थ का सत्कार सारी सिख कौम करती है।

दसम ग्रंथ की वाणियॉ जैसे की जाप साहिब, तव परसाद सवैये और चौपाई साहिब सिखों के रोजाना सजदा नितनेम का हिस्सा है और यह वानियॉ खडें बाटे की पहोल जिस को आम भाषा में अमृत छकना कहते है, को बनाते वक्त पढी जाती है। तखत हजूर साहिब, तखत पटना साहिब और निहंग सिंह के गुरूद्वारों में दसम ग्रन्थ का गुरू ग्रन्थ साहिब के साथ प्रकाष होता है और रोज हुकाम्नामें भी लिया जाते है। दसम ग्रंथ में गुरू गोबिन्द सिंह जी निम्नलिखित वाणियॉ दर्ज हैं ।

जाप साहिब	अकाल उसतति	बचित्र नाटक
चंडी चरित्र उक्ति बिलास	चंडी चरित्र भाग दूसरा	चंडी की वार
ज्ञान पर बोध	चौबीस अवतार	ब्रह्मा अवतार
रूद्र अवतार	शब्द हजारे	सवैये
शास्त्रनाम माला	जफरनामा	
अथ पखयान चरित्र लिख्यते	हिकायत	

सतगुरू गोबिन्द सिंह के ऊपर गुरमत विचारधारा का असर बचपन से ही था। गुरमत विचारधारा के साथ साथ उन्होंने अनेक भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया और वेद, पुराण, उपनिषद, कुरान, शास्त्रों और अन्य धर्मो के ग्रन्थों को भी पढ़ा समझा।

पोंटा साहिब में गोबिंद सिंह ने रचना का कार्य शुरू किया। पूर्व सत्गुरुओं की वाणी का निचोड़, सतगुर गोविन्द सिंह जी ने जाप साहिब बानी में ढाला, जिसमे निरंकार के अनेक नाम लिखे। फिर अकाल पुरख की उसतति में बानी लिखी। आनंदपुर साहिब में, बचित्र नाटक रचना, में गुरु साहिब ने अपनी

जिन्दगी के कुछ अंश लिखे और प्रथम सत्गुरुओं की और अपनी आत्मिक वंशावली का जिक्र किया।

चंडी को ''आदि शक्ति'' रूप में समझा और स्त्री एवम मूर्ति रूप की मान्यता को खत्म करने के लिए चंडी चरित्र नामक चार रचनाए की जो दसम ग्रंथ में दर्ज हैं। अथ पख्यान चरित्र लिखते में चतुर महिलाओं और पुरुषों के चरित्र लिखे की कैसे यह संसार इर्षा, द्वेष, काम और अन्य विकारों से ग्रसित है। यह वाणी आनंदपुर साहिब में समाप्त की। इसके इलावा शास्त्र नाम माला में शस्त्रों को अध्यात्मिक शैली में सींचा और 33 सवैये में रस्मो और मान्यताओं पर चोट मारी।

अपनी रचनाओ की पोथियाँ बनाई और लिखारिओं ने इन रचनाओ की कई नकले तैयार कीं और आम संगत में यह रचनाए फैल गईं। तद पश्चात आनंदपुर की जंग, चमकौर की जंग, मुक्तसर की जंग और बहादुर शाह की मदद के बाद हजुर साहिब, नांदेड में शरीर त्याग दिया। बाद में उन की धर्म पत्नी माता सुन्दरी के कहने पर भाई मनी सिंह खालसा और अन्य खालसा साथियों ने गुरु साहिब की पोथियों को इकट्ठा कर एक सांचे में ढाला जिसको आज दसम ग्रंथ कहा जाता है।

अद्वैत वेदांत भारत की विभिन्न दार्शनिक विधाओं में सर्वाधिक चर्चित दर्शन है। अद्वैत वेदांत के सूत्र विश्व के प्राचीनतम साहित्य ऋग्वेद मिल जाते हैं। उसके बाद अद्वैत वेदांत की चिंतनधारा का संकेत हमें उपनिषद, महाकाव्य सूत्र तथा व्याख्या साहित्य में भली प्रकार मिलता है। अद्वैत वेदांत का प्रथम आचार्य गौडपाद को माना जाता है, जिन्होंने सर्वप्रथम माण्डूक्य उपनिषद में परम सत 'अद्वैत' पर कार्य का लिखकर भाष्य प्रस्तुत किया है, जो ''माण्डूक्य कारिका'' नाम से प्रसिद्ध है। जिसके बाद आचार्य गोविंदा, आचार्य शंकर, मंडन मिश्र, सुरेश्वर, पदम पाद, वाचस्पति मिश्र आते हैं, जो कि प्राचीन वेदांती कहलाते हैं। नव्य वेदांत में श्री हर्ष, चितसुख, मधुसूदन सरस्वती, सदानंद आदि आते हैं। अहं ब्रह्मास्मि अद्वैत वेदांत यह भारत में प्रतिपादित दर्शन की कई विचारधाराओँ में से एक है, जिसके आदि शंकराचार्य पुरस्कर्ता थे। भारत में परब्रह्म के स्वरूप के बारे में कई विचारधाराएं हैं।

जिसमें द्वैत, अद्वैतया केवलाद्वैत, विशिष्टाद्वैत, शुद्धाद्वैत, द्वैताद्वैत जैसी कई सैद्धांतिक विचारधाराएं हैं। जिस आचार्य ने जिस रूप में ब्रह्म को जाना उसका वर्णन किया। इतनी विचारधाराएं होने पर भी सभी यह मानते है कि भगवान ही इस सृष्टि का नियंता है। अद्वैतविचारधारा के संस्थापक शंकराचार्य हैं, जिसे शांकराद्वैत या केवलाद्वैत भी कहा जाता है। शंकराचार्य मानते हैँ कि संसार में ब्रह्म ही सत्य है। बाकी सब मिथ्या है (ब्रह्म सत्य, जगत मिथ्या)। जीव केवल अज्ञान के कारण ही ब्रह्म को नहीं जान पाता जबकि ब्रह्म तो उसके ही अंदर विराजमान है। उन्होंने अपने ब्रह्मसूत्र में ''अहं ब्रह्मास्मि'' ऐसा कहकर अद्वैतसिद्धांत बताया है, जिसे वेदों, उपनिषदों, ब्रह्मसूत्र, गीता तथा श्रीमद्भागवत द्वारा उन्होंने सिद्ध किया है। अद्वैतसिद्धांत चराचर सृष्टि में भी व्याप्त है। जब पैर में काँटा चुभता है तब आखोँ से पानी आता है और हाथ काँटा निकालने के लिए जाता है। ये अद्वैतका एक उत्तम उदाहरण है।

विषय विस्तार

निम्नलिखित संकलपना अद्वैतवेदांत और दसम ग्रंथ दोनो में ही दर्ज हैं ।

जगत का कारण– ईश्वर

यह निर्गुण, निराकार, अविकारी, चित् ब्रह्म ही जगत् का कारण है। जगत् के कारण के रूप में उसे ईश्वर कहा जाता है। मायोपहित ब्रह्म ही ईश्वर है। अतः ब्रह्म और ईश्वर दो तत्व नहीं हैं– दोनों एक ही हैं। जगत् का कारण होना– यह ब्रह्म का तटस्थ लक्षण है। तटस्थ लक्षण का अर्थ है, वह लक्षण जो ब्रह्म का अंग न होते हुए भी ब्रह्म की ओर संकेत करे। जगत् ब्रह्म पर आश्रित है, परन्तु ब्रह्म जगत् पर किसी भी प्रकार आश्रित नहीं है, वह स्वतंत्र है। जगत् का कारण प्रकृति, अणु या स्वभाव में से कोई नहीं हो सकता। इसी से उपनिषदों ने स्पष्ट कहा है कि ब्रह्म वह है जो जगत् की सृष्टि, स्थिति और लय का कारण है। जगत् की सृष्टि आदि के लिए ब्रह्म को किसी अन्य तत्व की आवश्यकता नहीं होती। इसी से ब्रह्म को अभिन्न निमित्तोपादान कारण कहा है। जगत् की रचना ब्रह्मश्रित माया से होती है, परन्तु माया कोई स्वतंत्र तत्व नहीं है। यह मिथ्या है, इसलिए ब्रह्म को ही कारण कहा गया है। सृष्टि वास्तविक नहीं है, अतः उसे मायाजनित कहा गया है। माया या अविद्या के कारण ही जहाँ कोई नाम–रूप नहीं है, जहाँ भेद नहीं है, वहाँ नाम–रूप और भेद का आभास होता है। इसी से सृष्टि को ब्रह्म का विवर्त भी कहा गया है। विवर्त का अर्थ है कारण या किसी वस्तु का अपने स्वरूप में स्थित रहते हुए अन्य रूपों में अवभासित होना, अर्थात् परिवर्तन वास्तविक नहीं बल्कि आभास मात्र है।

दसम ग्रंथ के चंडी चरित्रा उक्ति बिलास के अध्याय पहले में लिखा हैः–

ਸਵੈਯਾ ॥ ਆਦਿ ਅਪਾਰ ਅਲੇਖ ਅਨੰਤ ਅਕਾਲ ਅਭੇਖ ਅਲੱਖ ਅਨਾਸਾ ॥

ਕੈ ਸ਼ਿਵ ਸ਼ਕਤਿ ਦਏ ਸੂਤ ਚਾਰ ਰਜੋ ਤਮ ਸਤ ਤਿਹੂ ਪੁਰ ਬਾਸਾ ॥

ਦਿਯੁਸ ਨਿਸਾ ਸਸਿ ਸੁਰਕੈ ਦੀਪ ਸੁ ਸ੍ਰਿਸਟਿ ਰਚੀ ਪੰਚ ਤੱਤ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਾ ॥

ਬੈਰ ਬਢਾਇ ਲਗਾਇ ਸੁਰਾਸੁਰ ਆਪਹਿ ਦੇਖਤ ਬੈਠ ਤਮਾਸ਼ਾ ॥ ੧ ॥

वह आदि, अपार, अलेख, अनंत, अकाल, है इसका तात्पर्य है कि वह किसी काल में नहीं जन्मा उसकों कोई लेखन के द्वारा वर्णित नहीं कर सकता । वह अनिर्वचनीय है। यही बात अद्वैत वेदांत में लिखी गई है। जब ब्रह्मके स्वरूप लक्षण की बात की जाती है। जिसमें सत, चित, आनंद, ज्ञान, अनंत की बात की गई

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-6* February (Part2) * 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

है। वह अवर्णनीय है। इसमें आगे बताया जाता है कि वह षिव है। उसने अपनी शक्ति द्ववारा सत, रज, तम, का निर्माण किया है। जैसे एक दीपक की रोशनी हर जगह फैल जाती है। वैसे ही वह हर जगह है, विराजमान है। उसने अपनी शक्ति माया से पांच तत्वों की बनी इस सृष्टि का निर्माण किया है। इस संसार के अंदर वैर, विरोध, प्रेम आदि से उसे बनाया है। वह खुद बैठ कर तमाशा देख रहा है। अर्थात सब कुछ माया शक्ति से एक खेल तमाशा बनाया है। जो मिथ्या है।

मोक्ष और ज्ञान

अद्वैतवेदांत में तीन प्रकार की तीन प्रकार की सत्ता बताई गई है :–

(1) पारमार्थिक सत्ता
(2) व्यावहरिक सत्ता
(3) प्रातिभासिक सत्ता

प्रातिभासिक सत्ता के अंदर स्वप्न, भ्रम इत्यादि रखे जाते हैं। विश्व को व्यावहरिक सत्ता के अंतर्गत रखा है। विश्व व्यावहरिक दृष्टिकोण से पूर्णतः सत्य है। विश्व 'स्वप्न', भ्रम आदि की अपेक्षा अधिक सत्य हैं। विश्व पारमार्थिक दृष्टिकोण से असत्य प्रतीत होता है।

आचार्य शंकर जीवन में धर्म, अर्थ और काम को निरर्थक मानते हैं। वे ज्ञान को अद्वैतज्ञान की परम साधना मानते हैं, क्योंकि ज्ञान समस्त कर्मों को जलाकर भस्म कर देता है। सृष्टि का विवेचन करते समय कि इसकी उत्पत्ति कैसे होती है?, वे इसका मूल कारण ब्रह्म को मानते हैं। वह ब्रह्म अपनी 'माया' शक्ति के सहयोग से इस सृष्टि का निर्माण करता है, ऐसी उनकी धारणा है। लेकिन यहाँ यह नहीं भूलना चाहिए कि शक्ति और शक्तिमान एक ही हैं। दोनों में कोई अंतर नहीं है। इस प्रकार सृष्टि के विवेचन से एक बात और भी स्पष्ट होती है कि परमात्मा को सर्वव्यापक कहना भी भूल है, क्योंकि वह सर्वरूप है। वह अनेकरूप हो गया, 'यह अनेकता है ही नहीं', 'मैं एक हूँ बहुत हो जाऊँ' अद्वैत मत का यह कथन संकेत करता है कि शैतान या बुरी आत्मा का कोई अस्तित्व नहीं है। ऐसा कहीं दिखाई भी देता है, तो वह वस्तुतः नहीं है भ्रम है बस। जीवों और ब्रह्मैव नापरः– जीव ही ब्रह्म है अन्य नहीं।

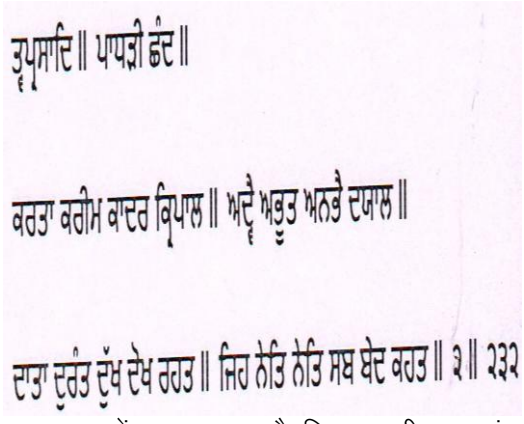

दसम ग्रंथ के भगऊती ऊसतती में लिखा हैः–

ਤ੍ਵਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥ ਪਾਧੜੀ ਛੰਦ ॥

ਕਰਤਾ ਕਰੀਮ ਕਾਦਰ ਕ੍ਰਿਪਾਲ ॥ ਅਦ੍ਵੈ ਅਭੂਤ ਅਨਭੈ ਦਿਆਲ ॥

ਦਾਤਾ ਦੁਰੰਤ ਦੁੱਖ ਦੋਖ ਰਹਤ ॥ ਜਿਹ ਨੇਤਿ ਨੇਤਿ ਸਭ ਬੇਦ ਕਹਤ ॥ ੨ ॥ ੨੩੨

इसमें बताया गया है कि ब्रह्म ही इस संसार का कर्ता है। वह अद्वैत है, अभूत है यानी कि वह त्रिकाला बाधित सत है। यह त्रिकाला बाधित सतः– पारमार्थिक सत्, व्यावहरिक सत्, प्रतिभासिक सत् है। वह खुद निर्गुण है, वह दुख रहित है, डर रहित है, रंग रहित है। उसका वर्णन सिर्फ नेति नेति द्वार ही किया जा सकता है।

निष्काम उपासना और बुद्धि, भाव, कर्म का संतुलन

ऐसे में बंधन और मुक्ति जैसे शब्द भी खेलमात्र हैं। विचारों से ही व्यक्ति बंधता है। उसी के द्वारा मुक्त होता है। भवरोग से मुक्त होने का एकमात्र उपाय है विचार। उसी के लिए निष्काम कर्म और निष्काम उपासना को आचार्य शंकर ने साधना बताया। निष्काम होने का अर्थ है संसार की वस्तुओं की कामना न करना, क्योंकि शारीरिक माँग तो प्रारब्धता से पूरी होगी और मनोवैज्ञानिक चाह की कोई सीमा नहीं है। इस सत्य को जानकर अपने कर्तव्यों का पालन करना तथा ईश्वरीय सत्ता के प्रति समर्पण का भाव, आलस्य प्रसाद से उठाकर चित्त को निश्चल बना देगें, जिसमें ज्ञान टिकेगा।

आचार्य ने बुद्धि, भाव और कर्म इन तीनों के संतुलन पर जोर दिया है। इस तरह वैदान्तिक साधना ही समग्र साधना है। कभी–कभी लगता है कि आचार्य शंकर परम्परावादी हैं। लेकिन वास्तविकता ऐसी नहीं है। उनकी छोटी–छोटी, लेकिन महत्त्वपूर्ण रचनाओं से इस बात का स्पष्ट संकेत मिलता है। परम्परा का निर्वाह करते हुए भी उनका लक्ष्य 'सत्य' प्रतिपादन करना है। प्रश्नोत्तरी में कहे इस श्लोकांश से संकेत मिलता है, पशुओं में भी पशु वह है जो धर्म को जानने के बाद भी उसका आचरण नहीं करता और जिसने शास्त्रों का अध्ययन किया है, फिर भी उसे आत्मबोध नहीं हुआ है। इसी प्रकार 'भज गोविन्दम' में बाहरी रूप–स्वरूप को नकारते हुए वे कहते हैं कि ''जो संसार को देखते हुए भी नहीं देखता है, उसने अपना पेट भरने के लिए तरह–तरह के वस्त्र धारण किए हुए हैं।''

दसम ग्रंथ के चंडी चरित्रा उक्ति बिलास के अध्याय पहले में लिखा हैः–

ਸਵੈਯਾ ॥ ਤਾਰਨ ਲੋਕ ਉਧਾਰਣ ਭੂਮਹਿ ਦੈਤ ਸੰਘਾਰਨ ਚੰਡ ਤੁੰਹੀ ਹੈ ॥

ਕਾਰਨ ਈਸ ਕਲਾ ਕਮਲਾ ਹਰਿ ਅਦ੍ਰਸੁਤਾ ਜਹ ਦੇਖੋ ਉਹੀ ਹੈ ॥

ਤਾਮਸ ਤਾ ਮਮਤਾ ਨਮਤਾਕਵਿਤਾ ਕਵਿ ਕੇ ਮਨ ਮੱਧਿ ਗੁਹੀ ਹੈ ॥

ਕੀਨੋ ਹੈ ਕੰਚਨ ਲੋਹ ਜਗਤ੍ਰ ਮੈ ਪਾਰਸ ਮੂਰਤ ਜਾਹਿ ਛੁਹੀ ਹੈ ॥ ੪ ॥

इस में बताया गया है। कि इस दुनिया को बनाने वाला भी तू ही है और संघारन चंड यानी नाश करने वाला भी तू है। इसका तात्पर्य है कि ब्रह्म से ही दुनिया बनी है और वह इसी में समा जाने वाली है। आगे बताया गया है संसार का कारण रूप भी तू ही है। इस संसार की रचना तूने अपनी कला से है जिसे माया कहा गया है। तमस, ममता, कवि के मन में कविता सबका रचयिता तू ही है। संसार में लोहे से सोना हो जाता है। जिस से तेरी पारस रूपी मूर्ती का स्पर्श हो जाता है। अर्थात जिसे यह ज्ञान हो जाता है। की ब्रह्म ही हमारे

अंदर बसता है। वह आत्मा से परमात्मा यानी ब्रह्म हो जाता है। यही आत्मबोध है । यही निष्काम उपासना है।

अज्ञानता और मुक्ति तथा ज्ञान प्राप्ति के गुण

अज्ञान के कारण जीव अपने स्वरूप को भूल कर अपने को कर्ता–भोक्ता समझता है। इसी से उसको शरीर धारण करना पड़ता है और बार–बार संसार में आना पड़ता है। यही बंधन है। इस बंधन से छुटकारा तभी मिलता है, जब अज्ञान का नाश होता है और जीव अपने को शुद्ध चौतन्य ब्रह्म के रूप में जान जाता है। शरीर रहते हुए भी ज्ञान के हो जाने पर जीव मुक्त हो सकता है, क्योंकि शरीर तभी तक बंधन है, जब तक जीव अपने को आत्मा रूप में न जानकर अपने को शरीर, इन्द्रिय, मन आदि के रूप में समझता है। इसी से वेदान्त में जीवनमुक्ति और विदेहमुक्ति नाम की दो प्रकार की मुक्ति मानी गयी हैं। ज्ञान हो जाने के बाद भी प्रारब्ध भोग के लिए शरीर कुम्हार के चक्र के समान पूर्वप्रेरित गति के कारण चलता रहता है। शरीर छूटने पर ज्ञानी विदेह मुक्ति प्राप्त करता है।

ज्ञान प्राप्ति के लिए सर्वप्रथम ज्ञान का अधिकार होना आवश्यक है। अधिकारी वही होता है। जिसमें निम्नलिखित चार गुण है–

1. नित्यानित्य वस्तु विवके
2. इहामुत्र फलभोग विराग
3. शमदमदि
4. मुमुक्षत्व

इन गुणों से युक्त होकर जब जिज्ञासु गुरू का उपदेश सुनता है। तब उसे ज्ञान हो जाता है। कभी कभी श्रवण मात्र से भी ज्ञान हो जाता है।परन्तु वह असाधारण जीवों को ही होता है। साधारण जीव श्रवण के उपरान्त मनन करते है। मनन से ब्रह्म के विषय में या आत्मा के विषय मे या ब्रह्मात्मैक्य के विषय में जो बौद्धिक शंकाए होती है, उनको दूर किया जाता है। और जब बुद्वि शंकामुक्त हो कर स्थिर हो जाती है। तभी ध्यान या निदिव्यसन सम्भव होता है। कर्म से अविद्या का नाश नहीं होता। क्योकि कर्म स्वंय अविद्याजन्य है। कर्म और उपासना से बुद्वि शुद्व होकर ज्ञान के योग्य होती है। इसी से इन दोनो की उपयोगिता तो मानी गई है। परन्तु मुक्ति ज्ञान या अविद्या नाश से ही होती है। मुक्ति के उपरान्त कर्म और उपासना की आवश्यकता नहीं रहती । फिर भी मुक्त पुरूष जन कल्याण के लिए या ईश्वरादेश की पूर्ति के लिए कर्म कर सकता है। जैसे आचार्य शंकर ने किया।

दसम ग्रंथ के भगऊती ऊसतती में लिखा हैः–

ਅਨਛਿੱਜ ਤੇਜ ਅਨਭੈ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ॥ ਦਾਤਾ ਦੁਰੰਤ ਅਦ੍ਵੈ ਅਨਾਸ ॥

ਸਭ ਰੋਗ ਸੋਗ ਤੇ ਰਹਤ ਰੂਪ ॥ ਅਨਭੈ ਅਕਾਲ ਅੱਛੈ ਸਰੂਪ ॥ ੫ ॥ ੨੩੫ ॥

वह एक ऐसा प्रकाश है जिसे रोक नहीं सकता, उसमें कोई छिज्जत नही हो सकती यानी वह ही रहेगा। अर्थात वह प्रकाश के समान है जो सबके अंदर है, वह अद्वैत है, उसे कोई नष्ट नहीं कर सकता है। वह सब रोगो से रहित है।वह ज्ञान स्वरूप है और काल से रहित होने के कारण उसे काटा और बांटा नहीं जा सकता ।

भारत की संस्कृति में चेतना का विकास भी उतना ही मत्वपूर्ण है जितना कि शारीरिक विकास, भारत की संस्कृति में चेतना के विकास में कई उतार चढाव आए है। प्राचीन व परंपरागत भारतीय संस्कृति ज्ञान व चिंतन से समृद्व मानी जाती थी। भारतीय संस्कृति में समय समय पर ज्ञानी पुरूषों व गुरूओं ने आत्मचेतना के विकास में योगदान दिया है जैसे आचार्य शंकर, कबीर दास, रविदास, गुरूनानक देव जी, गुरू गोबिंद सिंह जी इत्यादि। परंतु भारतीय संस्कृति एक बहुधर्मी बहुजातीय व बहुलवादी समाज से मुक्त दिखाई दे रहा है। भारतीय समाज ने ज्ञानी पुरूषों गुरूओं व भगवान को भी बांट लिया है। जो ग्रंथ भारतीय संस्कृति की शान बढाते थे व भारतीय समाज को एकजुट रखने में मदद करते थे। उन्हें भी लोगो ने बांट लिया है। जैसे वेद, उपनिषद, कवीर वाणी, रामचरितमानस, वेदांतसार, गुरूग्रंथ साहिब आदि। गुरूओं व ज्ञानीपुरूषों ने समय समय पर समझाने की कोशिश की है कि परमात्मा ब्रह्म एक ही है। चाहे उसे किसी अलग लिपि में लिखो या उसका अलग नाम दो उसका स्वरूप इससे नहीं बदलेगा।

निष्कर्ष

इसी तरह सिख पंथ की नींव गुरू गोबिन्द सिंह जी द्वारा हिदू धर्म को बचाने के लिए रखी गई है। गुरूगोबिंद सिंह जी का मानना था कि धर्म उन संस्कारों को धारण करना है जो अत्याचरी का नाश करे।परंतु आज समाज ने गुरूगोबिंद सिंह जी की शिक्षाओं को भी बांट लिया है। कैसे दशम ग्रंथ की शिक्षा और अद्वैत वेदांत आदि काल से चली आ रही भारतीय अद्वैत वेदांत परंपरा की शिक्षा हमें एक ही ज्ञान का प्रकाश कराती है। यही इस प्रस्तावित शोध पत्र के मुख्य उद्देश्यों में से एक है वर्तमान की परिस्थितियों व भविष्य की अपेक्षाओं के अनुरूप भारतीय संस्कृति की इन महान परंमराओं का पुन परिभाषित व अवलोकन करने की आवश्यकता को दिखाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

हिंदी ग्रंथ

शुक्ला, करूनेसा, आचार्य गौडपाद और प्राचीन वेदांत, नागार्जुन बौद्व संस्थान, गोरखपुर 1983.

मायावती, श्री शंकराचार्यविरासिता उपदेशसहस्त्री एक अध्ययन, ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली, 1991.

दसोरा, नंदलाल, विवेकाचूडामणि, हिंदी अनुवाद और टिप्पणी के साथ संपादित, रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार, 1994.

जैन, सुधा, अद्वैततत्तवमीमांसा सुरेश्वराचार्यकृत नैष्कर्म्यसिद्वि के परिप्रेक्ष्य में, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली, 1986.

शर्मा, प्रीति, अभिप्रायप्रकाशिका :चित्सुखाचार्यप्रणीता ब्रहमसिद्वि का टिका एक अध्ययन, ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली, 1994.

ईशावास्योपनिश्षद, हिंदी अनुवाद, शांकरभाश्यसहित, गीताप्रेस गोरखुपर.

केनोपन्यिषद, हिंदी अनुवाद, शंकरभाश्यसहित, गीताप्रेस गोरखपुर.

मुण्डकोपनिषद, हिंदी अनुवाद, शांकरभाश्यसहित, गीताप्रेस गोरखपुर.

ईषादि नौ उपनिषद, अन्वय हिंदी, व्याख्यासहित, गीताप्रेस गोरखपुर.

पंजाबी ग्रंथ

सिंह, सुरिंदर, दसम ग्रंथ, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ, 2002.

सिंह, जोध, गुरमति निर्णय, मेसर्य अतरचंद कपूर एंड संस, अनारकली, लाहौर, छठा संस्करण, 1945.

सिंह, साहिब, गुरमति प्रकाष, लाहौर बुक शॉप, प्रथम संस्कारण, 1947.

सिंह, साहिब, गुरमति प्रभाकर, श्री गुरमत प्रेस, अमृसर, तीसरा संस्करण, 1922.

सिंह, साहिब, गुरवाणी विआकरण प्रकाशन, प्रोफेसर साहिब सिंह खालखा कॉलेज, अमृतसर.

सिंह, साहिब, दस वारां सटीक, लाहौर बुक शॉप, प्रथम संस्करण, 1946.